प्रतिवेद्य

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

सिविल अपील संख्या 7363/2000

(एस एल पी (सी) संख्या 9862/2018)

राजस्थान राज्य और अन्य अपीलार्थी (गण)

बनाम

शिव दयाल और अन्य प्रत्यर्थी (गण)

साथ में

सिविल अपील संख्या 7364/2000

और

सिविल अपील संख्या 7365/2000

निर्णय

अभय मनोहर सप्रे, न्यायाधीश

1. ये अपीलें एस. बी. सिविल द्वितीय अपील सं. 83,84 और 85/1999 में राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर पीठ द्वारा दिनांक 23.03.1999 को पारित अंतिम निर्णय और आदेश के विरुद्ध निर्देशित

की गई हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने, वर्तमान अपीलार्थियों द्वारा दायर की गई दूसरी अपील को खारिज कर दिया।

2. इन अपीलों के निस्तारण के लिए मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार है-

3. अपीलकर्ता प्रतिवादी हैं और प्रतिवादी नंबर 1 दीवानी मुकदमे में वादी है, जिससे ये अपीलें उत्पन्न होती हैं।

4. अपीलकर्ता नं. 1 राजस्थान राज्य है और प्रत्यर्थी नं. 1 खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम (इसके बाद इसे 'एमएमआरडी अधिनियम'के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के तहत वाद भूमि के संबंध में खनन पट्टेदार होने का दावा करता है।

5. प्रत्यर्थी नं. 1 ने अपीलकर्ता राज्य और उसके प्राधिकारियों के विरुद्ध एक सिविल वाद दायर किया और उसमें प्रत्यर्थी नं. 1 द्वारा वाद भूमि पर खनन कार्यों को चलाने में हस्तक्षेप करने से राज्य और उसके प्राधिकारियों को रोकने के लिए स्थायी व्यादेश का अनुतोष चाहा ।

6. प्रत्यर्थी नं. 1 ने दावे में अन्य बातों के साथ-साथ यह भी प्रकथन किया कि वाद भूमि किसी संरक्षित वन क्षेत्र का हिस्सा नहीं थी, जैसा कि राज्य प्राधिकारियों द्वारा दावा किया गया था, लेकिन यह राजस्व क्षेत्र का एक हिस्सा था। यह प्रकथन किया गया कि चूंकि मुकदमा भूमि संरक्षित वन क्षेत्र में नहीं आती थी, इसलिए प्रत्यर्थी नं. 1 (वादी) को राज्य और उसके प्राधिकारियों के किसी हस्तक्षेप के बिना वाद भूमि पर खनन कार्य करने का अधिकार था।

7. राज्य ने मुकदमें में किए गए प्रकथनों को अस्वीकार करके मुकदमा लड़ा। निचली अदालत ने विवाद्यक तैयार किए। पक्षकारों ने

अपनी साक्ष्य को प्रस्तुत किया । निचली अदालत ने निर्णय और डिक्री दिनांकित 10.05.1998 द्वारा अभियोक्ता के पक्ष में वाद की घोषणा की और वाद भूमि के संबंध में राज्य और उसके प्राधिकारियों के विरुद्ध व्यादेश मंजूर किया, जैसा कि मुकदमा में प्रार्थना की गई थी ।

8. राज्य ने आहत होकर जिला न्यायाधीश के समक्ष पहली अपील दायर की। दिनांक 03.09.1998 के निर्णय द्वारा, प्रथम अपील न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया और निचली अदालत के निर्णय/डिक्री की पुष्टि की, जिसके पश्चात राज्य द्वारा उच्च न्यायालय में दूसरी अपील दायर की गई।

9. आक्षेपित आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए दूसरी अपीलों को खारिज कर दिया कि अपीलों में विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्वलित नहीं था। इस आदेश के खिलाफ राज्य ने आहत होकर इस न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति के माध्यम से वर्तमान अपीलें दायर की हैं।

10. अतः संक्षिप्त प्रश्न, जो इन अपीलों में विचारार्थ उठता है, यह है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा राज्य की दूसरी अपीलों को इस आधार पर खारिज करना न्यायोचित था कि इन अपीलों में विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्वलित नहीं था।

11. श्री मिलिंद कुमार, अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता और श्री एस. के. भट्टाचार्य, प्रत्यर्थी नं. 1 के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

12. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के बाद और मामले के रिकॉर्ड के अवलोकन करने के बाद, हम अपीलों को स्वीकार करने, आक्षेपित आदेश को रद्द करने और कानून के अनुसार गुण-दोष के

आधार पर नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करने के लिए विवश हैं ।

13. हमारी राय में, मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करने की आवश्यकता इसलिए उत्पन्न हुई है क्योंकि हम पाते हैं कि दूसरी अपील में विधि के कई सारवान प्रश्न अंतर्वलित थे, जिनका उत्तर विधि के अनुसार गुण-दोष के आधार पर दिया जाना था। इसलिए, उच्च न्यायालय इस प्रकार से अभिनिर्धारित करने में सही नहीं था।

14. वास्तव में, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस आधार पर दूसरी अपील को खारिज कर दिया कि चूंकि दो न्यायालयों ने मुकदमा की डिक्री दी है, इसलिए अपीलों में कानून का कोई ठोस सवाल नहीं उठता है। दूसरे शब्दों में, उच्च न्यायालय इस विचार से भ्रमित हो गया कि चूंकि दो न्यायालयों ने मुकदमा की डिक्री दी है, जिसके परिणामस्वरूप राज्य के खिलाफ डिक्री पारित की गई है, इसलिए अपीलों में कानून का कोई ठोस सवाल नहीं उठता है। यह आक्षेपित आदेश की अंतिम अनुच्छेद से स्पष्ट है, जो निम्नानुसार हैः

इन परिस्थितियों में, जब दोनों न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंच गए हैं कि विवादित क्षेत्र वन क्षेत्र के बाहर है। अतः, टी. एन. गोवर्धन बनाम यू. ओ. आई. (उपरोक्त उद्धृत) में अधिकथित सिद्धांतों को इस अपील में लागू नहीं किया जा सकता।" (जोर दिया गया)

15. हम उपर्युक्त तर्क और उच्च न्यायालय द्वारा किए गए निष्कर्ष से सहमत नहीं हैं।

16. यह विधि का सिद्धांत नहीं है कि जहां उच्च न्यायालय यह पाता है कि दो न्यायालयों का समवर्ती निष्कर्ष है (चाहे वह वाद को खारिज

करने या डिक्री का हो), वहां ऐसा निष्कर्ष दूसरी अपील में अविवाद्य हो जाता है।

17. यह सच है कि इस न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में निर्धारित किया गया है कि तथ्य का समवर्ती निष्कर्ष आमतौर पर सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की खंड 100 (जिसे इसमें इसके बाद 'संहिता'कहा गया है) के तहत दूसरी अपील की सुनवाई करते समय उच्च न्यायालय पर बाध्यकारी होता है। तथापि, विधि का यह नियम कुछ जाने-माने अपवादों के अधीन है जिनका उल्लेख नीचे किया गया है।

18. यह एक सामान्य विधि है कि तथ्यों पर किसी भी निष्कर्ष को दर्ज करने के लिए, निचली अदालत से पक्षकारों के अभिवचनों के आलोक में संपूर्ण साक्ष्य (मौखिक और दस्तावेजी) का मूल्यांकन करने की अपेक्षा की जाती है।

19. इसी प्रकार, यह भी एक सामान्य विधि है कि अपीलीयन्यायालय को प्रथम अपील की सुनवाई करते समय साक्ष्य की नए सिरे से सराहना करने का और या तो निचली अदालत के निष्कर्ष की पुष्टि करने या उसे उलट देने की अधिकार क्षेत्र है।

20. यदि अपील न्यायालय निष्कर्ष की पुष्टि करता है, तो इसे 'तथ्य का समवर्ती निष्कर्ष' कहा जाता है, जबकि यदि निष्कर्ष को उलट दिया जाता है, तो इसे 'विपरीत निष्कर्ष' कहा जाता है। इन अभिव्यक्तियों को कानूनी भाषा में अच्छी तरह से जाना जाता है।

21. जब तथ्य के किसी समवर्ती निष्कर्ष पर दूसरी अपील में हमला किया जाता है, तो अपीलकर्ता यह इंगित करने का हकदार है कि यह कानून में बुरा है क्योंकि यह अभिवचनों के अनुसार नहीं था या यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था या यह तात्विक दस्तावेजी साक्ष्य के

गलत पठन पर आधारित था या यह कानून के किसी प्रावधान के खिलाफ दर्ज किया गया था और अंत में यह निर्णय ऐसा है जिस पर कोई भी न्यायाधीश उचित रूप से नहीं पहुंच सकता था। **(तत्कालीन विद्वत न्यायाधीश विवियन बोस, नागपुर उच्च न्यायालय द्वारा राजेश्वर विश्वनाथ मामिदवार और अन्य बनाम दशरथ नारायण चिलवेकर (एआईआर 1943 नागपुर 117 पैरा 43)वाले मामले में की गई टिप्पणी को देखें।)**

22. हमारी राय में, यदि कोई एक या अधिक आधार, जैसा ऊपर वर्णित है, अभिवचन और साक्ष्य के आधार पर किसी समुचित मामले में बनाया जाता है, तो ऐसा आधार संहिता की खंड 100 के अर्थ में विधि का सारवान प्रश्न होगा।

23. मामले के तथ्यों पर आते हुए, हमारा विचार है कि निम्नलिखित प्रश्न हैं जो मुकदमे के पक्षकारों के अधिकारों के उचित न्यायनिर्णयन के लिए मुकदमे/अपील में विचार करने के लिए उत्पन्न होते हैं, और संहिता की खंड 100 के अर्थ में सारवान प्रश्नों की प्रकृति के हैं।

24. पहला, क्या वाद भूमि संरक्षित वन क्षेत्र अर्थात् वन भूमि का एक हिस्सा थी और, यदि हां, तो क्या पक्षकारों ने केंद्र और राज्य द्वारा अधिनियमित वन कानूनों के सभी वैधानिक प्रावधानों की पूर्ति की थी?

25. दूसरा, क्या वाद भूमि राजस्व भूमि का एक हिस्सा थी और, यदि हां, तो, क्या वाद के पक्षकारों ने राज्य राजस्व कानूनों के सभी वैधानिक प्रावधानों की पूर्ति की थी?

26. तीसरा, क्या राज्य द्वारा अभियोक्ता को एमएमआरडी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार खनन कार्य करने के लिए वाद भूमि का खनन अनुज्ञापत्र दिया जा सकता है और, यदि हां, तो क्या यह प्रासंगिक वन

और राजस्व कानूनों के साथ एमएमआरडी अधिनियम के सभी वैधानिक प्रावधानों की पूर्ति करता है?

27. चौथा, क्या यह मुकदमा वन कानूनों या एमएमआरडी अधिनियम या/और राजस्व कानूनों के किसी प्रावधान द्वारा अभिव्यक्त रूप से या निहितार्थ से प्रभावित होता है।

28. अंत में, क्या वादी ने तथ्यों/साक्ष्य पर साबित कर दिया है कि वाद भूमि राजस्व भूमि का एक हिस्सा है और इसलिए, यह संरक्षित वन क्षेत्र में नहीं आता है और, यदि ऐसा है, तो क्या वादी के पक्ष में स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने के लिए प्रथम दृष्टया कोई मामला, सुविधा संतुलन और अपूरणीय क्षति का बनता है?

29. हमारी राय में, उपर्युक्त सभी पांच प्रश्न मामले में उत्पन्न हुए थे।वास्तव में, अभिवचनों, साक्ष्यों और ऊपर उल्लिखित लागू कानूनों के प्रकाश में इन प्रश्नों का निर्णय किए बिना वाद का विचारण नहीं किया जा सकता था।

30. अतः, हमारे विचार से, उच्च न्यायालय को मामले में उत्पन्न विधि के समुचित सारवान प्रश्न (ओं) की विरचना करके दूसरी अपील को स्वीकार करना चाहिए था और उनके संबंधित गुणदोष के आधार पर उनका उत्तर देना चाहिए था, बजाए इसके की उपरोक्त किसी भी प्रश्न पर विचार किए बिना अपीलों को खारिज कर दें ।

31. इस कारण से, हमारा विचार है कि आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप आवश्यक है ताकि उच्च न्यायालय विवाद का निर्णय उसके उचित दृष्टिकोण से करने में सक्षम हो सके।

32. पूर्वगामी चर्चा के आलोक में, अपील सफल होती है और तदनुसार स्वीकार की जाती है। आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाता है। मामले में उत्पन्न होने वाले कानून के उचित सारवान प्रश्न तैयार करने के बाद गुण-दोष के आधार पर दूसरी अपील पर निर्णय लेने के लिए मामले को उच्च न्यायालय में भेजा जाता है।

33. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उच्च न्यायालय विशिष्ट वन अधिनियमों (केंद्र और राज्य), एमएमआरडी अधिनियम और राज्य राजस्व कानूनों के प्रासंगिक प्रावधानों के संदर्भ में अभिवचनों/साक्ष्यों और दोनों न्यायालयों के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए उचित प्रश्न तैयार करेगा।

34. तथापि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि मामले को नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए उच्च न्यायालय को भेजने के लिए राय बनाकर, हमने मामले के गुण-दोष पर कोई राय व्यक्त नहीं की है।

35. तथापि, यह हमारे ध्यान में लाया गया कि सिविल मुकदमें में अपीलों की विचाराधीनता के दौरान शिव दयाल वादी/प्रत्यर्थी नं. 1 की मृत्यु हो गई है। तथापि, हम पाते हैं कि उसकी पत्नी-श्रीमती कस्तूरी देवी पहले से ही दो संबंधित अपीलों/सिविल वादों में रिकॉर्ड पर है;दूसरा, तीनों वाद/अपीलों को, अर्थात् शिव दयाल द्वारा दायर एक और उसकी पत्नी कस्तूरी देवी द्वारा दायर दो) को उनके समानांतर निपटान के लिए एक साथ जोड़ दिया गया था। तीसरा, जब मृतक का एक कानूनी प्रतिनिधि पहले से ही रिकॉर्ड में है, तो अपील समाप्त नहीं होगी; और अंत में, जब मामले की रिमांड निर्देशित की गई है, तो मृतक के शेष कानूनी प्रतिनिधि, यदि कोई हैं, को रिकॉर्ड पर लाने के लिए परिणामी कदम लंबित अपीलों में उच्च न्यायालय के समक्ष उठाए जा सकते हैं।

इन चार कारणों से हमारा विचार है कि शिव दयाल के खिलाफ दायर अपीलें समाप्त नहीं हुई हैं।

36. हालांकि, मामले को उच्च न्यायालय में भेजने के बाद, पक्षकारों को दूसरी अपील के वाद शीर्षक में आवश्यक संशोधन करने की स्वतंत्रता दी गई है ताकि दूसरी अपील की सुनवाई से पहले शिव दयाल का नाम हटाकर उस स्थान पर पर उनकी पत्नी कस्तूरी देवी और अन्य कानूनी प्रतिनिधि, यदि हैं, के नाम को प्रतिस्थापित कर सकें।

37. हम उच्च न्यायालय से अपील की सुनवाई 6 महीने के भीतर करने का अनुरोध करते हैं।

न्यायाधीश अभय मनोहर सप्रे

न्यायाधीश आर सुभाष रेड्डी

नई दिल्ली

14 अगस्त, 2019

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**'के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय वादी के प्रतिबंधित उपयोग के लिए उसकी भाषा में समझाने के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।